International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 18-04-2026, Accepted: 19-05-2026, Published: 03-06-2026
Volume 12, Issue 2, 2026, Page No. 156-158

हिंदी कहानियों का शिल्प और पर्यावरणीय संवेदनाः मानव–प्रकृति संबंध की सतत व्याख्या

श्वेता पारीक[1], निर्मला राव[2]
[1] शोधार्थी, हिंदी विभाग, संगम विश्वविद्यालय, राज्यस्थान, भारत
[2] प्रोफेसर, हिंदी विभाग, संगम विश्वविद्यालय, राज्यस्थान, भारत
DOI: https://doi.org/10.66856/ijhr.2026.12.2.12157

सारांश
स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानी भारतीय समाज के बदलते सामाजिक, सांस्कृतिक और पर्यावरणीय यथार्थ की सशक्त अभिव्यक्ति रही है। प्रस्तुत शोध–पत्र का उद्देश्य हिंदी कहानियों के शिल्प–विधान के माध्यम से व्यक्त पर्यावरणीय संवेदना तथा मानव–प्रकृति संबंध की व्याख्या करना है। इस अध्ययन में गुणात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति का उपयोग करते हुए चयनित कहानियों का पाठ–विश्लेषण किया गया है। यह पाया गया कि हिंदी कहानियों में प्रकृति केवल पृष्ठभूमि नहीं, बल्कि एक सक्रिय संवेदनात्मक और वैचारिक तत्व के रूप में उपस्थित है। कथा–संरचना, भाषा, प्रतीक एवं कथन–तकनीक के माध्यम से पर्यावरणीय संकट, सह–अस्तित्व और सतत विकास की अवधारणाएँ प्रभावी रूप से अभिव्यक्त होती हैं। यह शोध इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि हिंदी कहानी का शिल्प पर्यावरणीय चेतना को गहन बनाने और सतत भविष्य की दिशा में सामाजिक जागरूकता उत्पन्न करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

मूल शब्दः पर्यावरणीय संवेदना, शिल्प–विधान, हिंदी कहानी, मानव–प्रकृति संबंध, सतत विकास, ईको–क्रिटिसिज़्म

वर्तमान समय में पर्यावरणीय संकट मानव सभ्यता के समक्ष एक गंभीर चुनौती के रूप में उपस्थित है। जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई, प्रदूषण तथा प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन ने मानव–प्रकृति संबंध को असंतुलित कर दिया है। ऐसे समय में साहित्य, विशेषकर हिंदी कहानी, केवल मनोरंजन का माध्यम न होकर सामाजिक चेतना का वाहक बन जाती है। स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानी ने समाज के विविध आयामों के साथ–साथ पर्यावरणीय प्रश्नों को भी गंभीरता से उठाया है। विशेष रूप से 1975 के बाद, जब औद्योगीकरण, शहरीकरण और वैष्वीकरण का प्रभाव बढ़ा, तब कहानियों में प्रकृति के साथ मनुष्य के बदलते संबंधों का चित्रण अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगा। इस संदर्भ में शिल्प–विधान की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है, क्योंकि वही कथा को प्रभावी अभिव्यक्ति प्रदान करता है।

साहित्य समीक्षा

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानी पर साहित्यिक आलोचना की एक समृद्ध और विकसित परंपरा रही है, जिसमें कहानी के कथ्य, संवेदना, वैचारिक प्रवृत्तियों तथा सामाजिक सरोकारों पर व्यापक रूप से विचार किया गया है, किंतु शिल्प–विधान और पर्यावरणीय संवेदना के अंतर्संबंध को केंद्र में रखकर किए गए अध्ययन अपेक्षाकृत सीमित दिखाई देते हैं। हिंदी कहानी के विकास और उसकी संरचनात्मक विशेषताओं को समझने के लिए नामवर सिंह की कृति "कहानीः नई कहानी" एक आधारभूत ग्रंथ के रूप में स्वीकार की जाती है, जिसमें उन्होंने कहानी को केवल कथानक की दृष्टि से नहीं, बल्कि उसकी संवेदनात्मक संरचना, भाषा, कथन–शैली और यथार्थबोध के संदर्भ में व्याख्यायित किया है। उनके अनुसार नई कहानी मनुष्य की बदलती चेतना की अभिव्यक्ति है, जो सामाजिक परिस्थितियों के साथ–साथ अभिव्यक्ति के नए रूपों को भी जन्म देती है। यह दृष्टि शिल्प–विधान को स्थिर न मानकर एक गतिशील प्रक्रिया के रूप में देखने की प्रेरणा देती है, जो पर्यावरणीय अनुभवों की अभिव्यक्ति में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। इसी प्रकार रामविलास शर्मा ने "साहित्य और विचारधारा" तथा "हिंदी कहानी की भूमि" में साहित्य को सामाजिक यथार्थ और ऐतिहासिक प्रक्रियाओं से जोड़ते हुए भाषा, संरचना और पात्र–विन्यास को वर्गीय तथा वैचारिक संदर्भों में विश्लेषित किया है। उनके अनुसार साहित्य की भाषा और शिल्प उस समाज की संरचना से निर्मित होते हैं जिसमें वह जन्म लेता है, अतः पर्यावरणीय संकट और प्राकृतिक संसाधनों के असमान वितरण जैसी समस्याएँ भी कहानी के शिल्प और कथ्य दोनों को प्रभावित करती हैं। मैनेजर पांडेय की कृतियाँ "साहित्य और समाज" तथा "आलोचना की सामाजिक दृष्टि" शिल्प–विधान को केवल सौंदर्यात्मक उपकरण न मानकर सामाजिक अनुभवों की अभिव्यक्ति का माध्यम मानती हैं; वे इस बात पर बल देते हैं कि भाषा, प्रतीक और संरचना के माध्यम से साहित्य समाज के अंतर्विरोधों को उजागर करता है, जो पर्यावरणीय विमर्श के संदर्भ में भी अत्यंत प्रासंगिक है। दूधनाथ सिंह की "कहानी का समय" समकालीन हिंदी कहानी के विकास को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में रखते हुए यह स्पष्ट करती है कि बदलते सामाजिक–राजनीतिक संदर्भों के साथ कहानी की संरचना और कथन–तकनीक में भी परिवर्तन आता है; यह दृष्टिकोण 1975 के बाद के दौर में पर्यावरणीय संकट, शहरीकरण और औद्योगीकरण के प्रभावों को समझने में सहायक सिद्ध होता है। विजयमोहन सिंह और रमेशचंद्र शाह जैसे आलोचकों ने कहानी के शिल्पगत आयामों—जैसे कथा–संरचना, समय–प्रयोग, प्रतीकात्मकता और बहुस्वरीयता—का गहन विश्लेषण प्रस्तुत किया है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि कहानी का शिल्प केवल अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं, बल्कि अर्थ–निर्माण की सक्रिय प्रक्रिया है। शिवकुमार मिश्र की "कथा शिल्प के आयाम" विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें विखंडित संरचना, आत्मपरकता, प्रतीकात्मकता और प्रयोगधर्मिता जैसे तत्वों के माध्यम से समकालीन कहानी के शिल्पगत परिवर्तन को समझाया गया है; ये सभी तत्व पर्यावरणीय संवेदना की अभिव्यक्ति में भी उपयोगी सिद्ध होते हैं, क्योंकि पर्यावरणीय संकट स्वयं एक जटिल और बहुस्तरीय यथार्थ है, जिसे पारंपरिक रैखिक शैली में अभिव्यक्त करना कठिन है। उत्तर–आधुनिक विमर्श के संदर्भ में सुधीश पचौरी तथा प्रभात त्रिपाठी ने हिंदी कहानी में विखंडन, बहुस्वरीयता और अनिश्चितता जैसे शिल्पगत तत्वों को रेखांकित किया है, जो आधुनिक जीवन की अस्थिरता और पर्यावरणीय संकट की जटिलता को व्यक्त करने में सहायक हैं। दूसरी ओर, स्त्री–विमर्श और दलित–विमर्श से जुड़े आलोचकों—जैसे

शंभुनाथ, कंवल भारती, रजनी तिलक और कात्यायनी—ने यह स्पष्ट किया है कि हाशिए के अनुभवों की अभिव्यक्ति के लिए शिल्प में परिवर्तन आवश्यक होता है; यह दृष्टि पर्यावरणीय विमर्श के साथ भी जुड़ती है, क्योंकि पर्यावरणीय संकट का प्रभाव सबसे अधिक हाशिए के समुदायों पर पड़ता है। वैश्विक स्तर पर ईको–क्रिटिसिज़्म (Eco-criticism) ने साहित्य और पर्यावरण के संबंधों को समझने के लिए एक सशक्त सैद्धांतिक आधार प्रदान किया है। लॉरेंस बुयेल की "The Environmental Imagination" तथा चेरिल ग्लॉटफेल्टी के कार्यों में यह प्रतिपादित किया गया है कि साहित्य में प्रकृति केवल पृष्ठभूमि नहीं, बल्कि एक सक्रिय अर्थ–निर्माणकारी तत्व है, जो मानव और प्रकृति के संबंधों को पुनर्परिभाषित करता है। भारतीय संदर्भ में भी पर्यावरणीय विमर्श ने धीरे–धीरे साहित्यिक आलोचना में स्थान प्राप्त किया है, किंतु हिंदी कहानी के शिल्प–विधान और पर्यावरणीय संवेदना के संयुक्त अध्ययन पर अभी भी पर्याप्त कार्य नहीं हुआ है। अधिकांश अध्ययनों में पर्यावरणीय विषयवस्तु को तो स्वीकार किया गया है, परंतु यह विश्लेषण कम किया गया है कि कथा–संरचना, भाषा, प्रतीक और कथन–तकनीक के माध्यम से यह संवेदना किस प्रकार निर्मित होती है। इस प्रकार उपलब्ध साहित्य का सम्यक् अवलोकन यह स्पष्ट करता है कि यद्यपि हिंदी कहानी, शिल्प–विधान और पर्यावरणीय विमर्श पर अलग–अलग स्तरों पर पर्याप्त कार्य हुआ है, तथापि इन तीनों के अंतर्संबंध को समग्र रूप में विश्लेषित करने की आवश्यकता बनी हुई है। प्रस्तुत शोध–पत्र इसी शोध–अंतराल को ध्यान में रखते हुए हिंदी कहानियों के शिल्प–विधान के माध्यम से व्यक्त पर्यावरणीय संवेदना तथा मानव–प्रकृति संबंध की सतत व्याख्या करने का प्रयास करता है, जिससे साहित्य और पर्यावरण के बीच स्थापित संबंधों को एक नए आलोचनात्मक परिप्रेक्ष्य में समझा जा सके।

विश्लेषण एवं चर्चा

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानियों में पर्यावरणीय संवेदना का विश्लेषण करते समय यह स्पष्ट रूप से प्रतिपादित होता है कि प्रकृति अब केवल पृष्ठभूमि या सजावटी तत्व नहीं रह गई है, बल्कि वह कथा के भीतर एक सक्रिय, अर्थगर्भित और वैचारिक शक्ति के रूप में उपस्थित है, जो मानव जीवन के साथ गहरे अंतर्संबंध स्थापित करती है। विशेषतः 1975 के बाद के सामाजिक–राजनीतिक परिवर्तनों—जैसे औद्योगीकरण, शहरीकरण, वैश्वीकरण और उपभोक्तावाद—ने मानव और प्रकृति के संबंध को गहराई से प्रभावित किया, जिसका प्रतिफल हिंदी कहानियों में विविध शिल्पगत रूपों के माध्यम से व्यक्त हुआ है। इस संदर्भ में पर्यावरणीय संवेदना केवल प्रकृति–चित्रण तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वह मानव की जीवन–शैली, उसकी नैतिकता, उसके अस्तित्वगत संकट और उसकी सांस्कृतिक स्मृतियों से जुड़कर एक व्यापक विमर्श का रूप ग्रहण कर लेती है। हिंदी कहानियों में प्रकृति का चित्रण द्विविध रूपों में दृष्टिगोचर होता है—एक ओर वह सौंदर्य, शांति और जीवन–संवर्द्धन का प्रतीक है, तो दूसरी ओर वह विनाश, संकट और असंतुलन की चेतावनी भी बनकर सामने आती है। ग्रामीण और आदिवासी जीवन से संबंधित कहानियों में प्रकृति के साथ एक जैविक और सहजीवी संबंध दिखाई देता है, जहाँ मनुष्य स्वयं को प्रकृति का अंग मानता है, न कि उसका स्वामी; इसके विपरीत शहरी जीवन पर आधारित कहानियों में प्रकृति से दूरी, कृत्रिमता और अलगाव का भाव प्रमुख रूप से उभरता है, जो आधुनिक जीवन की विडंबनाओं को उजागर करता है। यह द्वंद्वात्मक स्थिति हिंदी कहानी के शिल्प में भी परिलक्षित होती है, जहाँ कथा–संरचना, भाषा, प्रतीक और कथन–तकनीक के माध्यम से पर्यावरणीय संकट और मानव–प्रकृति संबंध की जटिलता को अभिव्यक्त किया जाता है।

शिल्प–विधान के स्तर पर यदि देखा जाए तो कथा–संरचना में आए परिवर्तन पर्यावरणीय संवेदना को गहन बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पारंपरिक रैखिक संरचना के स्थान पर खंडित और बहुपरतीय संरचना का प्रयोग इस तथ्य को रेखांकित करता है कि पर्यावरणीय संकट स्वयं एक जटिल और बहुआयामी समस्या है, जिसका कोई सरल समाधान नहीं है। ओपन–एंडिंग का प्रयोग विशेष रूप से इस संदर्भ में उल्लेखनीय है, क्योंकि यह पाठक को सक्रिय चिंतन की ओर प्रेरित करता है और यह संकेत देता है कि प्रकृति और पर्यावरण से जुड़े प्रश्न अभी अनुत्तरित हैं। भाषा और शैली के स्तर पर लोकभाषाओं, बोलियों और प्रकृति–संबंधित शब्दावली का प्रयोग कहानी को अधिक प्रामाणिक और जीवन्त बनाता है। यह भाषिक विविधता न केवल कथा के परिवेश को सजीव करती है, बल्कि यह भी दर्शाती है कि पर्यावरणीय अनुभव स्थानीय और सांस्कृतिक संदर्भों से गहराई से जुड़े होते हैं। उदाहरण स्वरूप, ग्रामीण कहानियों में मिट्टी, पानी, खेत, वृक्ष और ऋतुओं से संबंधित शब्दावली केवल वर्णनात्मक नहीं होती, बल्कि वे एक सांस्कृतिक स्मृति और जीवन–दृष्टि का प्रतिनिधित्व करती हैं।

प्रतीक और बिंबों का प्रयोग हिंदी कहानियों में पर्यावरणीय संवेदना को व्यक्त करने का एक अत्यंत प्रभावी माध्यम है। नदी, वृक्ष, जंगल, वर्षा, मिट्टी आदि तत्व केवल प्राकृतिक वस्तुएँ नहीं रह जाते, बल्कि वे जीवन, संघर्ष, स्थायित्व और परिवर्तन के प्रतीक बन जाते हैं। नदी जीवन के प्रवाह और निरंतरता का प्रतीक है, जबकि उसका प्रदूषित या सूखता हुआ रूप मानव द्वारा प्रकृति के दोहन का संकेत देता है। इसी प्रकार वृक्ष स्थायित्व, संरक्षण और आश्रय का प्रतीक है, जिसका कटना केवल पर्यावरणीय क्षति ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और मानवीय मूल्यों के ह्रास का भी द्योतक है। जंगल जैविक संतुलन और विविधता का प्रतिनिधित्व करता है, जबकि उसका विनाश मानव की स्वार्थपरता और विकास के नाम पर किए जा रहे विनाशकारी कार्यों को उजागर करता है। इस प्रकार प्रतीकात्मकता कहानी को बहुस्तरीय अर्थ प्रदान करती है और पाठक को गहन व्याख्या की ओर उन्मुख करती है।

कथन–तकनीक के स्तर पर फ्लैशबैक, स्मृति और बहुस्वरीयता का प्रयोग भी पर्यावरणीय विमर्श को सशक्त बनाता है। फ्लैशबैक के माध्यम से अतीत के उस समय को प्रस्तुत किया जाता है जब प्रकृति के साथ संतुलन अधिक था, और उसकी तुलना वर्तमान के संकटपूर्ण परिवेश से की जाती है। यह तकनीक न केवल समय के परिवर्तन को दर्शाती है, बल्कि यह भी संकेत देती है कि वर्तमान संकट मानव के अपने निर्णयों और जीवन–शैली का परिणाम है। बहुस्वरीयता के माध्यम से विभिन्न वर्गोंकृग्रामीण, शहरी, स्त्री, दलित और आदिवासी—की आवाज़ों को एक साथ प्रस्तुत किया जाता है, जिससे पर्यावरणीय प्रश्नों की बहुआयामी प्रकृति स्पष्ट होती है। इस प्रकार कहानी केवल एक दृष्टिकोण तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वह एक व्यापक सामाजिक संवाद का रूप धारण कर लेती है।

प्रमुख कथाकारों की रचनाओं में इन शिल्पगत प्रवृत्तियों का स्पष्ट उदाहरण मिलता है। शिवमूर्ति की कहानियों में ग्रामीण जीवन और प्रकृति के साथ गहरा संबंध दिखाई देता है, जहाँ पर्यावरण केवल जीवन का आधार नहीं, बल्कि अस्तित्व का अभिन्न अंग है। इसके विपरीत उषा प्रियंवदा की कहानियों में शहरी जीवन की कृत्रिमता और प्रकृति से दूरी का भाव प्रमुख है, जो आधुनिक मनुष्य के आंतरिक अकेलेपन और विखंडन को उजागर करता है। गीतांजलि श्री की कहानियों में प्रतीकात्मक और उत्तर–आधुनिक शिल्प के माध्यम से प्रकृति और संस्कृति के जटिल अंतर्संबंधों को प्रस्तुत किया गया है, जहाँ पर्यावरणीय संवेदना एक गहरे दार्शनिक विमर्श का रूप ले लेती है। इन सभी उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि शिल्प–विधान केवल अभिव्यक्ति का माध्यम

नहीं, बल्कि वह विचार और संवेदना के निर्माण में सक्रिय भूमिका निभाता है।

अंततः, हिंदी कहानियों में पर्यावरणीय संवेदना और शिल्प–विधान का अंतर्संबंध मानव–प्रकृति संबंध की सतत व्याख्या प्रस्तुत करता है, जो वर्तमान पर्यावरणीय संकट के संदर्भ में अत्यंत प्रासंगिक है। यह संबंध केवल साहित्यिक सौंदर्य तक सीमित नहीं है, बल्कि वह एक नैतिक और सांस्कृतिक आग्रह भी है, जो मनुष्य को प्रकृति के साथ संतुलित और सह–अस्तित्वपूर्ण संबंध स्थापित करने की प्रेरणा देता है। इस प्रकार हिंदी कहानी का शिल्प न केवल पर्यावरणीय यथार्थ को अभिव्यक्त करता है, बल्कि वह पाठक के भीतर एक नई चेतना का संचार भी करता है, जो सतत भविष्य की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन के आधार पर यह स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया जा सकता है कि हिंदी कहानियों में शिल्प–विधान और पर्यावरणीय संवेदना के बीच गहरा और अंतर्संबंधित रिश्ता स्थापित होता है, जो मानव–प्रकृति संबंध की सतत व्याख्या को संभव बनाता है। स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानी, विशेषकर 1975 के बाद, केवल सामाजिक यथार्थ का प्रतिबिंब नहीं रही, बल्कि उसने पर्यावरणीय संकट, संसाधनों के दोहन और प्रकृति से मनुष्य के बढ़ते अलगाव जैसे ज्वलंत प्रश्नों को भी अपने कथ्य और शिल्प के माध्यम से प्रभावी रूप में अभिव्यक्त किया है। इस अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि शिल्प–विधान—जिसमें कथा–संरचना, भाषा, प्रतीक, बिंब और कथन–तकनीक सम्मिलित हैं—पर्यावरणीय चिंताओं को गहराई और बहुस्तरीयता प्रदान करता है। खंडित संरचना, ओपन–एंडिंग, बहुस्वरीयता तथा स्मृति–आधारित कथन जैसी तकनीकें यह संकेत देती हैं कि पर्यावरणीय संकट एक जटिल और निरंतर विकसित होने वाली प्रक्रिया है, जिसका कोई तात्कालिक समाधान संभव नहीं है। इसी प्रकार प्रतीकों और बिंबों के माध्यम से प्रकृति को केवल भौतिक सत्ता न मानकर एक जीवंत और संवेदनशील इकाई के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जो मानव जीवन के साथ सह–अस्तित्व की अपेक्षा रखती है। हिंदी कहानियाँ यह भी स्पष्ट करती हैं कि पारंपरिक समाजों—विशेषतः ग्रामीण और आदिवासी जीवन—में प्रकृति के साथ एक संतुलित और सहजीवी संबंध विद्यमान था, जबकि आधुनिक शहरी जीवन में यह संबंध विखंडित और कृत्रिम होता जा रहा है। यह द्वंद्व साहित्य के माध्यम से न केवल उजागर होता है, बल्कि पाठक को आत्मचिंतन के लिए भी प्रेरित करता है। इस प्रकार कहानी केवल यथार्थ का चित्रण नहीं करती, बल्कि वह चेतना का निर्माण भी करती है। अतः यह कहा जा सकता है कि हिंदी कहानी का शिल्प पर्यावरणीय विमर्श को एक सशक्त साहित्यिक आधार प्रदान करता है और सतत विकास की अवधारणा को सांस्कृतिक एवं नैतिक स्तर पर स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि साहित्य, विशेषकर हिंदी कहानी, मानव और प्रकृति के बीच संतुलित संबंध की पुनर्स्थापना के लिए एक प्रभावी माध्यम है। भविष्य में इस क्षेत्र में तुलनात्मक और अंतर्विषयी अध्ययन की व्यापक संभावनाएँ विद्यमान हैं, जो हिंदी साहित्य को वैश्विक पर्यावरणीय विमर्श से और अधिक सशक्त रूप से जोड़ सकती हैं।

संदर्भ सूची

1. सिंह, नामवर. कहानीः नई कहानी. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, 2010.
2. सिंह, नामवर. दूसरी परंपरा की खोज. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, 2011.
3. शर्मा, रामविलास. साहित्य और विचारधारा. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, 2008.
4. शर्मा, रामविलास. हिंदी कहानी की भूमि. नई दिल्लीः लोकभारती प्रकाशन, 2005.
5. पांडेय, मैनेजर. साहित्य और समाज. नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन, 2006.
6. पांडेय, मैनेजर. आलोचना की सामाजिक दृष्टि. नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन, 2012.
7. सिंह, दूधनाथ. कहानी का समय. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, 2007.
8. सिंह, विजयमोहन. आधुनिक हिंदी कहानी. नई दिल्लीः राधाकृष्ण प्रकाशन, 2009.
9. शाह, रमेशचंद्र. कथा की बनावट. नई दिल्लीः भारतीय ज्ञानपीठ, 2010.
10. मिश्र, शिवकुमार. कथा शिल्प के आयाम. नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन, 2011.
11. पचौरी, सुधीश. उत्तर आधुनिक विमर्श. नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन, 2013.
12. त्रिपाठी, प्रभात. उत्तर–आधुनिकता और हिंदी कहानी. नई दिल्लीः साहित्य भवन, 2014.
13. शंभुनाथ. दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र. नई दिल्लीः वाणी प्रकाशन, 2012.
14. भारती, कंवल. दलित विमर्श की भूमिका. नई दिल्लीः राधाकृ ष्ण प्रकाशन, 2011.
15. कात्यायनी. स्त्री विमर्श और हिंदी साहित्य. नई दिल्लीः सामयिक प्रकाशन, 2010.